खून का रिश्ता

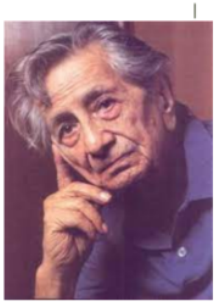

भीष्म साहनी

खून का रिश्ता

खाट की पाटी पर बैठा चाचा मंगलसेन हाथ में चिलम थामे सपने देख रहा था। उसने देखा कि वह समधियों के घर बैठा है और वीरजी की सगाई हो रही है। उसकी पगड़ी पर केसर के छींटे हैं और हाथ में दूध का गिलास है जिसे वह घूँट-घूँट करके पी रहा है। दूध पीते हुए कभी बादाम की गिरी मुँह में जाती है, कभी पिस्ते की। बाबूजी पास खड़े समधियों से उसका परिचय करा रहे हैं, यह मेरा चचाजाद छोटा भाई है, मंगलसेन!

समधी मंगलसेन के चारों ओर घूम रहे हैं। उनमें से एक झुककर बड़े आग्रह से पूछता है, और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और? अच्छा, ले आओ, आधा गिलास, मंगलसेन कहता है और तर्जनी से गिलास के तल में से शक्कर निकाल-निकालकर चाटने लगता है...

मंगलसेन ने जीभ का चटखरा लिया और सिर हिलाया। तंबाकू की कड़वाहट से भरे मुँह में भी मिठास आ गई, मगर स्वप्न भंग हो गया। हल्की-सी झुरझुरी मंगलसेन के सारे बदन में दौड़ गई और मन सगाई पर जाने के लिए ललक उठा। यह स्वप्नों की बात नहीं थी, आज सचमुच भतीजे की सगाई का दिन था। बस, थोड़ी देर बाद ही सगे-संबंधी घर आने लगेंगे, बाजा बजेगा, फिर आगे-आगे बाबूजी, पीछे-पीछे मंगलसेन और घर के अन्य संबंधी, सभी सड़क पर चलते हुए, समधियों के घर जाएँगे।

मंगलसेन के लिए खाट पर बैठना असंभव हो गया। बदन में खून तो छटाँक-भर था, मगर ऐसा उछलने लगा था कि बैठने नहीं देता था।

ऐन उसी वक्त कोठरी में संतू आ पहुँचा और खाट पर बैठकर मंगलसेन के हाथ में से चिलम लेते हुए बोला, "तुम्हें सगाई पर नहीं ले जाएँगे; चाचा।"

चाचा मंगलसेन के बदन में सिर से पाँव तक लरजिश हुई। पर यह सोचकर कि संतू खिलवाड़ कर रहा है, बोला, "बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते, कई बार कहा है। मुझे नहीं ले जाएँगे, तो क्या तुम्हें ले जाएँगे?"

"किसी को भी नहीं ले जाएँगे, तो क्या तुम्हें ले जाएँगे?"

"किसी को भी नहीं ले जाएँगे। वीरजी कहते हैं, सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी जाएँगे, और कोई नहीं जाएगा।"

"वीरजी आए हैं?" चाचा मंगलसेन के बदन में फिर लरजिश हुई और दिल धक्-धक् करने लगा। संतू घर का पुराना नौकर था, क्या मालूम ठीक ही कहता हो।

"ऊपर चलो, सब लोग खाना खा रहे हैं।" संतू ने चिलम के दो कश लगाए, फिर चिलम को ताक पर रखा और बाहर जाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने फिर एक बार घूमकर हँसते हुए कहा, "तुम्हें नहीं ले जाएँगे, चाचा, लगा लो शर्त, दो-दो रुपये की शर्त लगती है?"

"सब, बक-बक नहीं कर, जा अपना काम देख!"

ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। संतू ने गलत नहीं कहा था। रसोईघर में एक तरफ, दीवार के साथ पीठ लगाए बाबूजी बैठे खाना खा रहे थे। चौके के ऐन बीच में वीरजी और मनोरमा, भाई-बहन, एक साथ, एक ही थाली में खाना खा रहे थे। माँजी चूल्हे के सामने बैठी पराठे सेंक रही थीं। माँ बेटे को समझा रही थीं, "यही मौके खुशी के होते हैं, बेटा! कोई पैसे का भूखा नहीं होता। अकेले तुम्हारे पिताजी सगाई डलवाने जाएँगे तो समधी भी इसे अपना अपमान समझेंगे।"

"मैंने कह दिया, माँ, मेरी सगाई सवा रुपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जाएँगे। जो मंजूर नहीं हो तो अभी से..."

"बस-बस, आगे कुछ मत कहना!" माँ ने झट टोकते हुए कहा। फिर क्षुब्ध होकर बोली, "जो तुम्हारे मन में आए करो। आजकल कौन किसी की सुनता है! छोटा-सा परिवार और इसमें भी कभी कोई काम ढंग से नहीं हुआ। मुझे तो पहले ही मालूम था, तुम अपनी करोगे..."

"अपनी क्यों करेगा, मैं कान खींचकर इसे मनवा लूँगा।" बाबूजी ने बेटे की ओर देखते हुए बड़े दुलार से कहा।

पर वीरजी खीज उठे, "क्या आप खुद नहीं कहा करते थे कि ब्याह-शादियों पर पैसे बर्बाद नहीं करने चाहिए। अब अपने बेटे की सगाई का वक्त आया तो सिद्धांत ताक पर रख दिए। बस, आप अकेले जाइए और सवा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइए।"

"वाह जी, मैं क्यों न जाऊँ? आजकल बहनें भी जाती हैं!" मनोरमा सिर झटककर बोली, "वीरजी, तुम इस मामले में चुप रहो!"

"सुनो, बेटा, न तुम्हारी बात, न मेरी, "बाबूजी बोले, "केवल पाँच या सात संबंधी लेकर जाएँगे। कहोगे तो बाजा भी नहीं होगा। वहाँ उनसे कुछ माँगेंगे भी नहीं। जो समधी ठीक समझे दे दें, हम कुछ नहीं बोलेंगे।"

इस पर वीरजी तुनककर कुछ कहने जा ही रहे थे, जब सीढ़ियों पर मंगलसेन के कदमों की आवाज आई।

"अच्छा, अभी मंगलसेन से कोई बात नहीं करना। खाना खा लो, फिर बातें होती रहेंगी।" माँजी ने कहा।

पचास बरस की उम्र के मंगलसेन के बदन के सभी चूल ढीले पड़ गए थे। जब चलता तो उचक-उचककर हिचकोले खाता हुआ और जब सीढ़ियाँ चढ़ता तो पाँव घसीटकर, बार-बार छड़ी ठकोरता हुआ। जब भी वह सड़क पर जा रहा होता, मोड़ पर का साइकिलवाला दुकानदार हमेशा मंगलसेन से मजाक करके कहता, "आओ, मंगलसेनजी, पेच कस दें!" और जवाब में मंगलसेन हमेशा उसे छड़ी दिखाकर कहता, "अपने से बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते। तू अपनी हैसियत तो देख!"

मंगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में फौज में रह चुका था, इस कारण अब भी सिर पर खाकी पगड़ी पहनता था। खाकी रंग सरकारी रंग है, पटवारी से लेकर बड़े-बड़े इन्सपेक्टर तक सभी खाकी पगड़ी पहनते हैं। इस पर ऊँचा खानदान और शहर के धनीमानी भाई के घर में रहना, ऐंठता नहीं तो क्या करता?

दहलीज पर पहुँचकर मंगलसेन ने अंदर झाँका। खिचड़ी मूँछें सस्ता तंबाकू पीते रहने के कारण पीली हो रही थीं। घनी भौंहों के नीचे दाईं आँख कुछ ज्यादा खुली हुई और बाईं आँख कुछ ज्यादा सिकुड़ी हुई थी। सामने के तीन दाँत गायब थे।

"भौजाईजी, आप रोटियाँ सेंक रही हैं? नौकरों के होते हुए...!"

"आओ मंगलसेनजी, आओ, जरा देखो तो यहाँ कौन बैठा है!"

"नमस्ते, चाचाजी!" वीरजी ने बैठे-बैठे कहा।

"उठकर चाचाजी को पालागन करो, बेटा, तुम्हें इतनी भी अक्ल नहीं है!" बाबूजी ने बेटे को झिड़ककर कहा।

वीरजी उठ खड़े हुए और झुककर चाचाजी को पालागन किया। चाचाजी झेंप गए।

कोने में बैठा संतू, जो नल के पास बर्तन मलने लगा था, कंधे के पीछे मुँह छिपाए हँसने लगा।

"जीते रहो, बड़ी उम्र हो!" मंगलसेन ने कहा और वीरजी के सिर पर इस गंभीरता से हाथ फेरा कि वीरजी के बाल बिखर गए।

मनोरमा खिलखिलाकर हँसने लगी।

"सगाईवाले दिन वीरजी खुद आ गए हैं। वाह-वाह!"

"बैठ जा, बैठ जा मंगलसेन, बहुत बातें नहीं करते।" बाबूजी बोले।

"आप मेरी जगह पर बैठ जाइए, चाचाजी, मैं दूसरी चटाई ले लूँगा।" वीरजी ने कहा।

"दो मिनट खड़ा रहेगा तो मंगलसेन की टाँगें नहीं टूट जाएँगी!" बाबूजी बोले, "यह खुद भी चटाई पकड़ सकता है। जाओ मंगलसेन, जरा टाँगें हिलाओ और अपने लिए चटाई उठा लाओ।"

माँजी ने दाँत-तले होंठ दबाया और घूर-घूरकर बाबूजी की ओर देखने लगी, "नौकरों के सामने तो मंगलसेन के साथ इस तरह रुखाई से नहीं बोलना चाहिए। आखिर तो खून का रिश्ता है, कुछ लिहाज करना चाहिए।"

मंगलसेन छज्जे पर से चटाई उठाने गया। दरवाजे के पास पहुँचकर, नौकर की पीठ के पीछे से गुजरने लगा, तो संतू ने हँसकर कहा, "वहाँ नहीं है, चाचाजी, मैं देता हूँ, ठहरो। एक ही बर्तन रह गया है, मलकर उठता हूँ।"

संतू निश्चिन्त बैठा, कंधों के बीच सिर झुकाए बर्तन मलता रहा।

मनोरमा घुटनों के ऊपर अपनी ठुड्डी रखे, दोनों हाथों से अपने पैरों की उँगलियाँ मलती हुई, कोई वार्ता सुनाने लगी, "दुकानदारों की टाँगें कितनी छोटी होती हैं, भैया, क्या तुमने कभी देखा है?" अपने भाई की ओर कनखियों से देखकर हँसती हुई बोली, "जितनी देर वे गद्दी पर बैठे रहें, ठीक लगते हैं, पर जब उठें तो सहसा छोटे हो जाते हैं, इतनी छोटी-छोटी टाँगें! आज मैं एक दुकान पर सूटकेस लेने गई..."

"उठो, संतू, चटाई ला दो। हर वक्त का मजाक अच्छा नहीं होता।" चाचा मंगलसेन संतू से आग्रह करने लगा।

"वहाँ खड़े क्या कर रहे हो, मंगलसेन? चलो, इधर आओ! उठ संतू, चटाई ले आ, सुनता नहीं तू? इसे कोई बात कहो तो कान में दबा जाता है!" माँ बोली।

संतू की पीठ पर चाबुक पड़ी। उसी वक्त उठा और जाकर चटाई ले आया। माँजी ने चूल्हे के पास दीवार के साथ रखी दो थालियों में से एक थाली उठाकर मंगलसेन के सामने रख दी। मैले रूमाल से हाथ पोंछते हुए मंगलसेन चटाई पर बैठ गया। थाली में आज तीन भाजियाँ रखी थीं, चपातियाँ खूब गरम-गरम थीं।

सहसा बाबूजी ने मंगलसेन से पूछा, "आज रामदास के पास गए थे? किराया दिया उसने या नहीं?"

मंगलसेन खुशी में था। उसी तरह चहककर बोला, "बाबूजी वह अफीमची कभी घर पर मिलता है, कभी नहीं। आज घर पर था ही नहीं।"

"एक थप्पड़ मैं तेरे मुँह पर लगाऊँगा, तुमने क्या मुझे बच्चा समझ रखा है?"

रसोईघर में सहसा सन्नाटा छा गया। माँ ने होंठ भींच लिए। मंगलसेन की पुलकन सिहरन में बदल गई। उसका दायाँ गाल हिलने-सा लगा, जैसे चपत पड़ने पर सचमुच हिलने लगता है।

"छह महीने का किराया उस पर चढ़ गया है, तू करता क्या रहता है?"

नुक्कड़ में बैठे संतू के भी हाथ बर्तनों को मलते-मलते रुक गए। भाई-बहन फर्श की ओर देखने लगे। हाय, बेचारा, मनोरमा ने मन-ही-मन कहा और अपने पैरों की उँगलियों की ओर देखने लगी। वीरजी का खून खौल उठा। चाचाजी गरीब हैं न, इसीलिए इन्हें इतना दुत्कारा जाता है...

"और पराठा डालूँ, मंगलसेनजी?" माँ ने पूछा। मंगलसेन का कौर अभी गले में ही अटका हुआ था। दोनों हाथें से थाली को ढँकते हुए हड़बड़ाकर बोला, "नहीं, भौजाईजी, बस जी!"

"जब मेरे यहाँ रहते यह हाल है, तो जब मैं कभी बाहर जाऊँगा तो क्या हाल होगा? मैं चाहता हूँ, तू कुछ सीख जाएगा और किराए का सारा काम सँभाल ले। मगर छह महीने तुझे यहाँ आए हो गए, तूने कुछ नहीं सीखा।"

इस वाक्य को सुनकर मंगलसेन के सर्द लहू में थोड़ी-सी हरारत आई।

"मैं आज ही किराया ले आऊँगा, बाबूजी! न देगा तो जाएगा कहाँ? मेरा भी नाम नाम मंगलसेन है!"

"मुझे कभी बाहर जाना पड़ा, तो तुम्हीं को काम सँभालना है। नौकर कभी किसी को कमाकर नहीं खिलाते। जमीन-जायदाद का काम करना हो तो सुस्ती से काम नहीं चलता। कुछ हिम्मत से काम लिया करो।"

मंगलसेन के बदन में झुरझुरी हुई। दिल में ऐसा हुलास उठा कि जी चाहा, पगड़ी उतारकर बाबूजी के कदमों पर रख दे। हुमककर बोला, "चिंता न करो जी, मेरे होते यहाँ चिड़ी पड़क जाएगा तो कहना? डर किस बात का? मैंने लाम देखी है, बाबूजी! बसरे की लड़ाई में कप्तान रस्किन था हमारा। कहने लगा, देखो मंगलसेन, हमारी

शराब की बोतल लारी में रह गई है। वह हमें चाहिए। उधर मशीनगन चल रही थी। मैंने कहा, अभी लो, साहब! और अकेले मैं वहाँ से बोतल निकाल लाया। ऐसी क्या बात है..."

मंगलसेन फिर चहकने लगा। मनोरमा मुसकराई और कनखियों से अपने भाई की ओर देखकर धीमे-से बोली, "चाचाजी की दुम फिर हिलने लगी!"

मंगलसेन खाना खा चुका था। उठते हुए हँसकर बोला, "तो चार बजे चलेंगे न सगाई डलवाने?"

"तू जा, अपना काम देख, जो जरूरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे।" बाबूजी बोले।

चाचा मंगलसेन का दिल धक्-से रह गया। संतू शायद ठीक ही कहता था, मुझे नहीं ले चलेंगे। उसे रुलाई-सी आ गई, मगर फिर चुपचाप उठ खड़ा हुआ। बाहर जाकर जूते पहले, छड़ी उठाई और झूलता हुआ सीढ़ियों की ओर जाने लगा।

वीरजी का चेहरा क्रोध और लज्जा से तमतमा उठा। मनोरमा को डर लगा कि बात और बिगड़ेगी, वीरजी कहीं बाबूजी से न उलझ बैठें। माँजी को भी बुरा लगा। धीमे-से कहने लगीं, देखों जी, नौकरों के सामने मंगलसेन की इज्जत-आबरू का कुछ तो खयाल रखा करे। आखिर तो खून का रिश्ता है। कुछ तो मुँह-मुलाहिजा रखना चाहिए। दिन-भर आपका काम करता है।"

"मैंने उसे क्या कहा है?" बाबूजी ने हैरान होकर पूछा।

"यों रुखाई के साथ नहीं बोलते। वह क्या सोचता होगा? इस तरह बेआबरूई किसी की नहीं करनी चाहिए।"

"क्या बक रही हो? मैंने उसे क्या कहा है?" बाबूजी बोले। फिर सहसा वीरजी की ओर घूमकर कहने लगे, "अब तू बोल, भाई, क्या कहता है? कोई भी काम ढंग से करने देगा या नहीं?"

"मैंने कह दिया, पिताजी, आप अकेले जाइए और सवा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइए।"

रसोईघर में चुप्पी छा गई। इस समस्या का कोई हल नजर नहीं आ रहा था। वीरजी टस-से-मस नहीं हो रहे थे।

सहसा बाबूजी ने सिर पर से पगड़ी उतारी और सिर आगे को झुकाकर बोले, "कुछ तो इन सफेद बालों का खयाल कर! क्यों हमें रुसवा करता है?"

वीरजी गुस्से में थे। चाचा मंगलसेन गरीब हैं, इसीलिए उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता है। यह बात उसे खल रही थी। मगर जब बाबूजी ने पगड़ी उतारकर अपने सफेद बालों की दुहाई दी तो सहम गया। फिर भी साहस करके बोला, "यदि आप अकेले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ले जाइए। बस दो जने चले जाएँ।"

"कौन-से चाचा को?" माँजी ने पूछा।

"चाचा मंगलसेन को।"

कोने में बैठे संतू ने भी हैरान होकर सिर उठाया। माँ झट-से बोली, "हाय-हाय बेटा, शुभ-शुभ बोलो! अपने रईस भाइयों को छोड़कर इस मरदूद को साथ ले जाएँ? सारा शहर थू-थू करेगा!"

"माँजी, अभी तो आप कह रही थीं, खून का रिश्ता है। किधर गया खून का रिश्ता? चाचाजी गरीब हैं, इसीलिए?"

"मैं कब कहती हूँ, यह न जाए! लेकिन और संबंधी भी तो जाएँ। अपने धनी-मानी संबंधियों को छोड़ दें और इस बहुरूपिए को साथ ले जाएँ, क्या यह अच्छा लगेगा?"

"तो फिर बाबूजी अकेले जाएँ," वीरजी परेशान हो उठे, "मैंने जो कहना था कह दिया! अब जो तुम्हारे मन में आए करो, मेरा इससे कोई वास्ता नहीं।" और उठकर रसोईघर से बाहर चले गए।

बेटे के यों उठ जाने से रसोईघर में चुप्पी छा गई। माँ और बाप दोनों का मन खिन्न हो उठा। ऐसा शुभ दिन हो, बेटा घर पर आए और यों तकरार होने लगे। माँ का दिल टूक-टूक होने लगा। उधर बाबूजी का क्रोध बढ़ रहा था। उनका जी चाहता था कह दें, जा फिर मैं भी नहीं जाऊँगा। भेज दे जिसको भेजना चाहता है। मगर यह वक्त झगड़े को लंबा करने का न था।

सबसे पहले माँ ने हार मानी, "क्या बुरा कहता है! आजकल लड़के माँ-बाप के हजारों रुपये लुटा देते हैं। इसके विचार तो कितने ऊँचे हैं! यह तो सवा रुपये में सगाई करना चाहता है। तम मंगलसेन को ही अपने साथ ले जाओ। अकेले जाने से तो अच्छा है।"

बाबूजी बड़बड़ाए, बहुत बोले, मगर आखिर चुप हो गए। बच्चों के आगे किस माँ-बाप की चलती है? और चुपचाप उठकर अपने कमरे में जाने लगे।

"जा संतू, मंगलसेन को कह, तैयार हो जाए।" माँजी ने कहा।

मनोरमा चहक उठी और भागी हुई वीरजी को बताने चली गई कि बाबूजी मान गए हैं।

मंगलसेन को जब मालूम हुआ कि अकेला वही बाबूजी के साथ जाएगा, तो कितनी ही देर तक वह कोठरी में उचकता और चक्कर लगाता रहा। बदन का छटाँक-भर खून फिर उछलने लगा। जी चाहा कि संतू से उसी वक्त शर्त के दो रुपये रखवा ले। क्यों न हो, आखिर मुझसे बड़ा संबंधी है भी कौन, मुझे नहीं ले जाएँगे तो किसे ले जाएँगे? मैं और बाबूजी ही इस घर के कर्त्ता-धर्त्ता हैं और कौन है? जितना ही अधिक वह इस बात पर सोचता, उतना ही अधिक उसे अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता। आखिर उसने कोने में रखी ट्रंकी को खेला और कपड़े बदलने लगा।

घंटा-भर बाद जब मंगलसेन तैयार होकर आँगन में आया, तो माँजी का दिल बैठ गया - यह सूरत लेकर समधियों के घर जाएगा? मंगलसेन के सिर पर खाकी पगड़ी, नीचे मैली कमीज के ऊपर खाकी फौजी कोट, जिसके धागे निकल रहे थे और नीचे धारीदार पाजामा और मोटे-मोटे काले बूट। माँ को रुलाई आ गई। पर यह अवसर रोने का नहीं था। अपनी रुलाई को दबाती हुई वह आगे बढ़ आई।

"मनोरमा, जा भाई की आलमारी में से एक धुला पाजामा निकाल ला।" फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोली, "सुनते हो जी, अपनी एक पगड़ी इधर भेज देना। मंगलसेन के पास ढंग की पगड़ी नहीं है।"

मंगलसेन का कायाकल्प होने लगा। मनोरमा पाजामा ले आई। संतू बूट पालिश करने लगा। आँगन के ऐन बीचोंबीच एक कुरसी पर मंगलसेन को बिठा दिया गया और परिवार के लोग उसके आसपास भाग-दौड़ करने लगे। कहीं से मनोरमा की दो सहेलियाँ भी आ पहुँची थीं। मंगलसेन पहले से भी छोटा लग रहा था। नंगा सिर, दोनों हाथ घुटनों के बीच जोड़े वह आगे की ओर झुककर बैठा था। बार-बार उसे रोमांच हो रहा था।

मंगलसेन का स्वप्न सचमुच साकार हो उठा। समधियों के घर में उसकी वह आवभगत हुई कि देखते बनता था। मंगलसेन आरामकुरसी पर बैठा था और पीछे एक

आदमी खड़ा पंखा झल रहा था। समधी आगे-पीछे, हाथ बाँधे घूम रहे थे। एक आदमी ने सचमुच झुककर बड़े आग्रह से कहा, "और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और?"

और जवाब में मंगलसेन ने कहा, "हाँ, आधा गिलास ले आओ।"

समधियों के घर की ऐसी सज-धज थी कि मंगलसेन दंग रह गया और उसका सिर हवा में तैरने लगा। आवाज ऊँची करके बोला, "लड़की कुछ पढ़ी-लिखी भी है या नहीं? हमारा बेटा तो एम.ए. पास है।"

"जी, आपकी दया से लड़की ने इसी साल बी.ए. पास किया है।"

मंगलसेन ने छड़ी से फर्श को ठकोरा, फिर सिर हिलाकर बोला, "घर का काम-धंधा भी कुछ जानती है या सारा वक्त किताबें ही पढ़ती रहती है?"

"जी, थोड़ा-बहुत जानती है।"

"थोड़ा-बहुत क्यों?"

आखिर सगाई डलवाने का वक्त आया। समधी बादामों से भरे कितने ही थाल लाकर बाबूजी और मंगलसेन के सामने रखने लगे। बाबूजी ने हाथ बाँध दिए, "मैं तो केवल एक रुपया और चार आने लूँगा। मेरा इन चीजों में विश्वास नहीं है। हमें अब पुरानी रस्मों को बदलना चाहिए। आप सलामत रहें, आपका सवा रुपया भी मेरे लिए सवा लाख के बराबर है।"

"आपको किस चीज की कमी है, लालाजी! पर हमारा दिल रखने के लिए ही कुछ स्वीकार कर लीजिए।"

बाबूजी मुसकराए, "नहीं महराज, आप मुझे मजबूर न करें। यह उसूल की बात है। मैं तो सवा ही रुपया लेकर जाऊँगा। आपका सितारा बुलंद रहे! आपकी बेटी हमारे घर आएगी, तो साक्षात लक्ष्मी विराजेगी!"

मंगलसेन के लिए चुप रहना असंभव हो रहा था। हुमककर बोला, "एक बार कह जो दिया जी कि हम सवा रुपया ही लेंगे। आप बार-बार तंग क्यों करते हैं?"

बेटी के पिता हँस दिए और पास खड़े अपने किसी संबंधी के कान में बोले, "लड़के के चाचा हैं, दूर के। घर में टिके हुए हैं। लालाजी ने आसरा दे रखा है।"

आखिर समधी अंदर से एक थाल ले आए, जिस पर लाल रंग का रेशमी रूमाल बिछा था और बाबूजी के सामने रख दिया। बाबूजी ने रूमाल उठाया, तो नीचे चाँदी के थाल में चाँदी की तीन चमचम करती कटोरियाँ रखी थीं, एक में केसर, दूसरी में रांगला धागा, तीसरी में एक चमकता चाँदी का रुपया और चमकती चवन्नी। इसके अलावा तीन कटोरियों में तीन छोटे-छोटे चाँदी के चम्मच रखे थे।

"आपने आखिर अपनी ही बात की," बाबूजी ने हँसकर कहा, "मैं तो केवल सवा रुपया लेने आया था..." मगर थाल स्वीकार कर लिया और मन-ही-मन कटोरियों, थाल और चम्मचों का मूल्य आँकने लगे।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ छज्जे पर खड़ी थीं जब दोनों भाई सड़क पर आते दिखाई दिए। मंगलसेन के कंधे पर थाल था, लाल रंग के रूमाल से ढँका हुआ और आगे-आगे बाबूजी चले आ रहे थे।

वीरजी अब भी अपने कमरे में थे और पलंग पर लेटे किसी नावल के पन्नों में अपने मन को लगाने का विफल प्रयास कर रहे थे। उनका माथा थका हुआ था, मगर हृदय धूमिल भावनाओं से उद्वेलित होने लगा था। क्या प्रभा मेरे लिए भी कोई संदेश भेजेगी? सवा रुपये में सगाई डलवाने के बारे में वह क्या सोचती होगी? मन-ही-मन तो जरूर मेरे आदर्शों को सराहती होगी। मैंने एक गरीब आदमी को अपनी सगाई डलवाने के लिए भेजा। इससे अधिक प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे आदर्शों का क्या हो सकता है?

"लाख-लाख बधाइयाँ, भौजाईजी!" घर में कदम रखते ही मंगलसेन ने आवाज लगाई।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ भागती हुई जँगले पर आ गईं। बाबूजी गंभीर मुद्रा बनाये, आँगन में आए और छड़ी कोने में रखकर अपने कमरे में चले गए।

मनोरमा भागती हुई नीचे गई और झपटकर थाल चाचा मंगलसेन के हाथ से छीन लिया।

"कैसी पगली है! दो मिनट इंतजार नहीं कर सकती।"

"वाह जी, वाह!" मनोरमा ने हँसकर कहा, "बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबूजी ही बन बैठे हैं! लाइए, मुझे दीजिए। आपका काम पूरा हो गया।"

माँजी की दोनों बहनें जो इस बीच आ गई थीं, माँजी से गले मिल-मिलकर बधाई देने लगीं। आवाज सुनकर वीरजी भी जँगले पर आ खड़े हुए और नीचे आँगन का दृश्य देखने लगे। थाल पर रखे लाल रूमाल को देखते ही उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। सहसा ही वह ससुराल की चीजों से गहरा लगाव महसूस करने लगे। इस रूमाल को जरूर प्रभा ने अपने हाथ से छुआ होगा। उनका जी चाहा कि रूमाल को हाथ में लेकर चूम लें। इस भेंट को देखकर उनका मन प्रभा से मिलने के लिए बेताब होने लगा।

माँजी ने थाल पर से रूमाल उठाया। चमकती कटोरियाँ, चमकता थाल बीच में रखे चम्मच। वीरजी को महसूस हुआ, जैसे प्रभा ने अपने गोरे-गोरे हाथों से इन चीजों को करीने से सजाकर रखा होगा।

"पानी पिलाओ, संतू, "चाचा मंगलसेन ने आँगन में कुर्सी पर बैठते हुए, टाँग के ऊपर टाँग रखकर, संतू को आवाज लगाई।

इतने में माँजी को याद आई, "तीन कटोरियाँ और दो चम्ममच? यह क्या हिसाब हुआ? क्या तीन चम्मच नहीं दिए समधियों ने।" फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोलीं, "अजी सुनते हो! तुम भी कैसे हो, आज के दिन भी कोई अंदर जा बैठता है?"

"क्या है?" बाबूजी ने अंदर से ही पूछा।

"कुछ बताओ तो सही, समधियों ने क्या कुछ दिया है?"

"बस, थाल में जो कुछ है वही दिया है, तेरे बेटे ने मना जो कर दिया था।"

"क्या तीन कटोरियाँ थीं और दो चम्मच थे?"

"नहीं तो, चम्मच भी तीन थे।"

"चम्मच तो यहाँ सिर्फ दो रखे हैं।"

"नहीं-नहीं, ध्यान से देखों, जरूर तीन होंगे। मंगलसेन से पूछो, वही थाल उठाकर लाया था।"

"मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?"

मंगलसेन संतू को सगाई का ब्यौरा दे रहा था - समधी हमारे सामने हाथ बाँधे यों खड़े थे, जैसे नौकर हों। लड़की बड़ी सुशील है, बड़ी सलीकेवाली है, बी.ए. पास है, सीना-पिरोना भी जानती है...

"मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?"

"कौन-सा चम्मच? वहीं थाल में होगा।" मंगलसेन ने लापरवाही से जवाब दिया।

"थाल में तो नहीं है।"

"तो उन्होंने दो ही चम्मच दिए होंगे। बाबूजी ने थाल लिया था।"

"हमें बेवकूफ बना रहे हो, मंगलसेनजी, तुम्हारे भाई कह रहे हैं तीन चम्मच थे!"

इतने में बाबूजी की गरज सुनाई दी, "इसीलिए मेरे साथ गए थे कि चम्मच गवाँ आओगे? कुछ नहीं तो पाँच-पाँच रुपये का एक-एक चम्मच होगा।"

मंगलसेन ने उसी लापरवाही से कुरसी पर से उठकर कहा, "मैं अभी जाकर पूछ आता हूँ, इसमें क्या है? हो सकता है, उन्होंने दो ही चम्मच रखे हों।"

"वहाँ कहाँ जाओगे? बताओ चम्मच कहाँ है? सारा वक्त तो थाल पर रूमाल रखा रहा।"

"बाबूजी, थाल तो आपने लिया था, आपने चम्मच गिने नहीं थे?"

"मेरे साथ चालाकी करता है? बदजात! बता तीसरा चम्मच कहाँ है?"

माँजी चम्मच खो जाने पर विचलित हो उठी थीं। बहनों की ओर घूमकर बोलीं, "गिनी-चुनी तो समधियों ने चीजें दी हैं, उनमें से भी अगर कुछ खो जाए, तो बुरा तो आखिर लगता ही है!"

"कैसा ढीठ आदमी है, सुन रहा है और कुछ बोलता नहीं!" बाबूजी ने गरजकर कहा।

चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्सा आ गया। प्रभा ने चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँच ही नहीं। प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खो गई। वीरजी सहसा आवेश में आ गए। वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कंधों से पकड़कर झिंझोड़ दिया।

"आपको इसीलिए भेजा था कि आप चीजें गँवा आएँ?"

सभी चुप हो गए। सकता-सा छा गया। वीरजी खिन्न-से महसूस करने लगे कि मुझसे यह क्या भूल हो गई और झेंपकर वापस जाने लगे। "तुम बीच में मत पड़ो, बेटा! अगर चम्मच खो गया है तो तुम्हारी बला से! सबका धर्म अपने-अपने साथ है। एक चम्मच से कोई अमीर नहीं बन जाएगा!"

"जेब तो देखो इसकी।" बाबूजी ने गरजकर कहा।

मौसियाँ झेंप गईं और पीछे हट गईं। पर मनोरमा से न रहा गया। झट आगे बढ़कर वह जेब देखने लगी। रसोईघर की दहलीज पर संतू हाथ में पानी का गिलास उठाए रुक गया और मंगलसेन की ओर देखने लगा। चाचा मंगलसेन खड़ा कभी एक का मुँह देख रहा था, कभी दूसरे का। वह कुछ कहना चाहता था, मगर मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था।

एक जेब में से मैला-सा रूमाल निकला, फिर बीड़ियों की गड्डी, माचिस, छोटा-सा पैन्सिल का टुकड़ा।

"इस जेब में तो नहीं है।" मनोरमा बोली और दूसरी जेब देखने लगी। मनोरमा एक-एक चीज निकालती और अपनी सहेलियों को दिखा-दिखाकर हँसती।

दाईं जेब में कुछ खनका। मनोरमा चिल्ला उठी, "कुछ खनका है, इसी जेब में है, चोर पकड़ा गया! तुमने सुना, मालती?"

जेब में टूटा हुआ चाकू रखा था, जो चाबियों के गुच्छे से लगकर खनका था।

"छोड़ दो, मनोरमा! जाने दो, सबका धर्म अपने-अपने साथ है। आपसे चम्मच अच्छा नहीं है, मंगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी।"

मंगलसेन की साँस फूलने लगी और टाँगें काँपने लगीं, लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था।

"दोनों कान खोलकर सुन ले, मंगलसेन!" बाबूजी ने गरजकर कहा, "मैं तेरे से पाँच रुपये चम्मच के ले लूँगा, इसमें मैं कोई लिहाज नहीं करूँगा।"

मंगलसेन खड़े-खड़े गिर पड़ा।

"बधाई, बहनजी!" नीचे आँगन में से तीन-चार स्त्रियों की आवाज एक साथ आ गई।

मंगलसेन गिरा भी अजीब ढंग से। धम्म-से जमीन पर जो पड़ा तो उकड़ूँ हो गया, और पगड़ी उतरकर गले में आ गई। मनोरमा अपनी हँसी रोके न रोक सकी।

"देखो जी, कुछ तो खयाल करो। गली-मुहल्ला सुनता होगा। इतनी रुखाई से भी कोई बोलता है!" माँजी ने कहा, फिर घबराकर संतू से कहने लगीं, "इधर आओ संतू, और इन्हें छज्जे पर लिटा आओ।"

वीरजी फिर खिन्न-सा अनुभव करते हुए अपने कमरे में चले गए। मैंने जल्दबाजी की, मुझे बीच में नहीं पड़ना चाहिए था। इन्होंने चम्मच कहाँ चुराया होगा, जरूर कहीं गिर गया होगा।

बाबूजी नीचे अपने कमरे में चले गए। शीघ्र ही घर में ढोलक बजने की आवाज आने लगी। मनोरमा और उसकी सहेलियाँ आँगन में कालीन बिछवाकर बैठ गईं। ढोलक की आवाज सुनकर पड़ोसिनें घर में बधाई देने आने लगीं।

ऐन उसी वक्त गलीवाले दरवाजे के पास एक लड़का आ खड़ा हुआ। संकोचवश वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि अंदर जाएगा या वहीं खड़ा रहे। मनोरमा ने देखते ही पहचान लिया कि प्रभा का भाई, वीरजी का साला है। भागी हुई उसके पास जा पहुँची और शरारत से उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

"आओ, बेटाजी, अंदर आओ, तुम यहाँ पड़ोस में रहते हो न?"

"नहीं, मैं प्रभा का भाई हूँ।"

"मिठाई खाओगे?" मनोरमा ने फिर शरारत से कहा और हँसने लगी। लड़का सकुचा गया।

"नहीं, मैं तो यह देने आया हूँ," उसने कहा और जाकेट की जेब में से एक चमकता, सफेद चम्मच निकाला और मनोरमा के हाथ में देकर उन्हीं कदमों वापस लौट गया।

"हाय, चम्मच मिल गया! माँजी चम्मच मिल गया!"

पर माँजी संबंधियों से घिरी खड़ी थीं। मनोरमा रुक गई और माँ से नजरें मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी। चम्मच को कभी नाक पर

रखती, कभी हवा में हिलाती, कभी ऊँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर माँजी कुछ समझ ही नहीं रही थीं...

छज्जे पर संतू ने मंगलसेन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छींटा देते हुए बोला, "तुम शर्त जीत गए। बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नकद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा।"